जिसने बदली दिशा जगत् की,
धरती और आकाश की ।
जय बोलो ऋषि दयानन्द की,
जय सत्यार्थ प्रकाश की ।।

।। ओ३म् ।।

वर्ष - ६० अंक - १०
मूल्य : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १००) रु०
आजीवन - १०००) रु०
प्रतिमास ता० १३ को प्रकाशित

आर्य-संसार

आश्विन-कार्तिक : सम्वत् २०७५ वि० अक्टूबर – २०१८

राजा तेजनारायण सिंह जी

(विवरण पृष्ठ : १५ पर)

आर्य समाज कलकत्ता की गतिविधियाँ

३२ वाँ अन्तर्विद्यालय देश भक्ति गीत प्रतियोगिता

आर्य समाज कलकत्ता द्वारा आयोजित ३२वाँ अन्तर्विद्यालय देश भक्ति गीत प्रतियोगिता का आयोजन १९ अगस्त २०१८ को प्रातः १० बजे से लाला लाजपत राय जी की स्मृति में किया गया। इसमें महानगर के सुप्रसिद्ध ११ विद्यालयों ने भाग लिया । जिसमें प्रथम सेन्ट्रल मॉडल स्कूल की रायमा कर्मकार, द्वितीय श्री शिक्षायतन की उपमा प्रधान तथा तृतीय महेश्वरी विद्यालय के सुभम कुमार उपाध्याय रहे । कार्यक्रम के संयोजक विवेक सेठ एवं कार्यक्रम के संचालक श्री अशोक सिंह थे । कार्यक्रम को सफल बनाने में सभी युवा साथियों एवं विशेष कर श्री जुगल किशोर गोयल जी का योगदान था ।

संजय अग्रहरी

(अध्यक्ष युवा शाखा)

शुद्धि समाचार

(१) तबरेज अली पुत्र मो मुमताज अली आयु ३२ वर्ष दिनांक १७.७.२०१८ को आर्य समाज मन्दिर में स्वेच्छा से इस्लाम मत त्याकर वैदिक धर्म ग्रहण किया । शद्धि संस्कार के पश्चात् इनका नाम कबीर सिंह शेखावत रखा गया । शुद्धि संस्कार पं० देवव्रत तिवारी जी के पौरोहित्य में सम्पन्न हुआ ।

(२) शकीला खातून पुत्री शेख अजी रहमान आयु २५ वर्ष ने दिनांक १४,९.२०१८ को आर्य समाज कलकत्ता में स्वेच्छा से इस्लाम मत त्यागकर वैदिक धर्म ग्रहण किया । शुद्धि संस्कार के पश्चात् इनका नाम कविता दास रखा गया । शुद्धि संस्कार पं० देवव्रत तिवारी जी के पौरोहित्य में सम्पन्न हुआ ।

(३) रश्मि खातून पुत्री मो० शबीर आयु २३ वर्ष ने दिनांक १७.९,२०१८ को आर्यसमाज कलकत्ता में स्वेच्छा से इस्लाम मत त्यागकर वैदिक धर्म ग्रहण किया । शुद्धि संस्कार के पश्चात् इनका नाम रश्मि बेहरा रखा गया शुद्धि संस्कार पं० देवव्रत तिवारी जी के पौरोहित्य में सम्पन्न हुआ ।

(४) हसीना शेख आयु ३० वर्ष ने दिनांक २४.९.२०१८ को आर्यसमाज कलकत्ता में स्वेच्छा से इस्लाम मत त्यागकर वैदिक धर्म ग्रहण किया । शुद्धि संस्कार के पश्चात् इनका नाम राधिका मण्डल रखा गया । शुद्धि संस्कार पं० देवनारायण तिवारी जी के पौरोहित्य में सम्पन्न हुआ ।

शोक प्रस्ताव

(१) आर्य समाज हावड़ा के पूर्व प्रधान श्री प्रमोद अग्रवाल, पूर्व मन्त्री श्री अरुण आर्य, आर्य समाज कलकत्ता की सह-पुस्तकाध्यक्ष श्रीमती सुषमा गोयल एवं सदस्य श्री अजय आर्य की माताजी श्रीमती रामवती आर्या (धर्मपत्नी स्व० पुष्कर लाल जी आर्य, पूर्व प्रधान आर्यसमाज हावड़ा) का निधन दिनांक ३१ जुलाई २०१८ मंगलवार को १८ वर्ष की आयु में हो गया है ।

(२) आर्य कन्या महाविद्यालय की भूतपूर्व प्रधानाध्यापिका एवं आर्यसमाज कलकत्ता के अन्तरंग-सभा

(शेषांश पृष्ठ २७ पर)

ओ३म्

आर्य-संसार

वर्ष ६० अंक — १०
आश्विन-कार्तिक २०७५ वि०
दयानन्दाब्द - १९४
सृष्टि सं० - १,९६,०८,५३,११९
अक्टूबर — २०१८

आद्य सम्पादक
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय
(स्मृति शेष)

सम्पादक :
श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल
सहयोगी संपादक :
श्री सत्यप्रकाश जायसवाल
पं० योगेशराज उपाध्याय

शुल्क : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १०० रुपये
आजीवन : १००० रुपये

इस अंक की प्रस्तुति

१. आर्य समाज कलकत्ता की गतिविधियाँ — २

२. इस अंक की प्रस्तुति — ३

३. सर्वप्रियता - साभार: वेद-वन्दन — ४

४. स्वामी जी का स्वकथित जीवन-चरित्र -पं० लेखराम द्वारा संकलित — ११

५. सत्यार्थ प्रकाश काव्य-सुधा
महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश
का काव्यानुवाद -पं० देवनारायण तिवारी 'निर्भीक' — १३

६. राजा तेजनारायण सिंह जी — १५

७. योग दर्शन का विभूति पाद
प्रक्षिप्त नहीं है - सुखदेव व्यास — १७

८. कवियों की उपेक्षिता उर्मिला - परीक्षित मंडल 'प्रेमी' — २१

९. "स्वामी जी का मूर्त्तिपूजा पर कड़ा
प्रहार, सत्यार्थ प्रकाश में" - खुशहाल चन्द्र आर्य — २४

आर्य समाज कलकत्ता

१९, विधान सरणी, कोलकाता-७०० ००६

दूरभाष : २२४१-३४३९ *email : aryasamajkolkata@gmail.com*

'आर्य संसार' में प्रकाशित लेखों का उत्तरदायित्व सम्बन्धित लेखकों पर है ।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र कोलकाता ही होगा ।

३

सर्वप्रियता

सर्वप्रिय होना एक स्पृहणीय गुण है । सभी प्यार करें तो मनुष्य को विरोध का सामना ही क्यों करना पड़े ? सर्वप्रिय होने की प्रार्थना वेद के निम्न मंत्र में बड़े सीधे-सरल शब्दों में की गई —

प्रियं माकृणु देवेषु, प्रियं राजसु मा कृणु ।
प्रियं सर्वस्य पश्यत उतशूद्रे उतार्ये ।।

अथर्व०१९-६-३-१

मंत्र की भाषा अत्यन्त सरल है । लोग मुझे प्यार करें, इस एक सामान्य प्रार्थना को चार खण्डों में बाँट कर प्रार्थना की गयी है । प्रार्थना विश्व ब्रह्माण्ड के नायक, परमेश्वर से निम्नरूप में प्रस्तुत है -

(१) प्रियं मा कृणु देवेषु - देवों में मुझे प्रिय कीजिए, मैं देवों का प्रिय पात्र बनूँ । देवगण मुझे प्यार करें ।

(२) प्रियं राजसु मा कृणु - राजाओं में, राजपुरुषों में मुझे प्रिय करो । राजपुरुष मुझे प्यार करें ।

(३) प्रियं सर्वस्य पश्यतः - सभी देखने वालों में मुझे प्रिय कीजिए। सभी प्राणी मात्र मुझे प्यार करें। जिससे भी मिलें, जो भी मुझे देखे, वह मुझे प्यार करे ।

(४) उत शूद्रे उत आर्ये/उत अर्ये - वैश्य और शूद्र भी मुझे प्यार दें । अथवा सभी सज्जन मुझे प्यार करें ।

इस मन्त्र के स्वाध्याय में एक बात चारों खण्डों में समानरूप से विद्यमान है-हमें प्यार करे, 'प्रियं कृणु' । प्रियं कृणु की क्रिया है 'कृणु' - करें, मां है कर्म, मुझे, हमें करें । मां कृणु तो हुआ कि हमें करें। हमें क्या करें ? विद्वान्, बलवान्, गुणवान् या क्या ? सो 'प्रियं' मां का पूरक है । मां किं कुरु-प्रियं कुरु। सो, जब मैं कर्म हूँ तो मुझे तो कुछ करना है नहीं - **'कर्तुः इप्सिततमं कर्म'** कर्म तो कर्ता की इच्छा का पात्र है । कर्म तो कर्तृत्व के प्रति निरपेक्ष है । तो क्या 'लोग हमें प्यार करें' इस व्यापार में मुझे कुछ नहीं करना है ? कुम्भकार घड़ा बनाता है, जो करना है वह कुम्हार को करना है, घड़े को तो कुछ नहीं करना । हाँ, मिट्टी को तपस्या करके नरम लोचदार होना पड़ता है । जुलाहा कपड़ा बनाने का कर्ता है, कपड़ा कर्म है । सो कपड़े का कोई कर्तृत्व नहीं है। सो कर्म 'कर्तृत्व निरपेक्ष' है । इसी प्रकार 'मां प्रियं कुरु' में क्या मेरा कोई कर्तव्य नहीं है। उत्तर सीधा है - न हम घड़ा हैं न कपड़ा । परम प्रभु मुझे प्रिय करें । एतदर्थ पात्र की पात्रता तो हमें अर्जन करना पड़ेगा। क्या करने से हम प्रिय पात्र बनेंगे ? यह विचारणीय है । अब मन्त्र के एक-एक खण्ड पर थोड़ा विस्तार से विचार करते हैं -

(१) प्रियं मां कृणु देवेषु - यह प्रार्थना-याचना परमेश्वर से है। हे परमेश्वर ! हमें देवों का प्रिय

कीजिए । हम ऐसा जीवन जियें कि देवगण हमें प्यार करें । माता-पिता, गुरु, आचार्य, विद्वान्, अतिथि आदि देव हैं। **'मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव, अतिथि देवो भव'** इत्यादि प्रसिद्ध पाठ है **'विद्वान्सो हि देवा:'** भी है ही । ये कैसे प्रसन्न हों ? हमारा क्या कार्य इन्हें प्रसन्न करेगा और हम इनके किस प्रकार प्रिय बन सकेंगे ।

सीधे सरल व्यक्ति ऐसा सोचते हैं कि यदि हम माता, पिता आचार्य आदि की सेवा करें, उन्हें सुख से रखें तो वे हमसे प्रसन्न रहेंगे । यह ठीक है भी, किन्तु साथ ही यह भी कहा गया है -

'य: प्रीणयेत् सुचरितै: पितरं स पुत्र:' - जिस पुत्र के जीवन से, चरित्र आचरण व्यवहार से, उसके कार्यों से, माता-पिता प्रसन्न हो, वही पुत्र कहलाने का पात्र है । वेद का वचन है -

'अनुव्रत: पितु: पुत्र: मात्रा भवतु सम्मना:' - अथर्व० ३-३०-२

पुत्र पिता के अनुकूल आचरण करे और माता की भावनाओं का सम्मान करें तो माता - पिता का प्रिय पात्र बने ।

आचार्य की प्रिय पात्रता में उपरिलिखित बातों के अतिरिक्त और एक बात ध्यान में आती है आचार्य मेधाव्रत जी निर्मित अमर कृति दयानन्द लहरी में एक प्यारा श्लोक आता है —

'पवित्रार्षग्रन्थाध्ययनपटव: किन्नु बटवो,
मठे शिष्या नासन् प्रवर विरजानन्द यमिन: ।
परं प्रेम्ण: पात्रं परमभवस्त्वं कथमये,
गुरोर्विद्या यस्मिन् फलति स हि शिष्य: प्रियतम: ।।'

भाव यह है कि दण्डी विरजानन्द के आश्रम में कितने ही बुद्धिमान् शिष्य पढ़ते रहे होंगे किन्तु हे ऋषे दयानन्द । आप ही उनके परम प्रिय शिष्य क्यों कैसे, किस कारण से बन गये ? कवि उत्तर देते हैं -

'गुरोर्विद्या यस्मिन् फलति स हि शिष्य: प्रियतम: ।'

जिस शिष्य में गुरु की विद्या फलवती होती है, वही परम प्रिय होता है । सो आचार्य का प्रिय वही शिष्य होगा जो आचार्य की विद्या को सफल कर दे, जो गुरु का यश नाम बढ़ाता है । शिष्य की प्रतिष्ठा के साथ गुरु की प्रतिष्ठा होती है ।

महाभारत के युद्ध में अर्जुन की अप्रतिम युद्ध कला देखकर पितामह भीष्म अर्जुन के गुरु आचार्य द्रोण को बधाई देते थे । सो शिष्य गुरु की विद्या को फलवती करे । पिता का नाम उज्जवल करें, माता को सुखी करें एवं प्रिय आचरण से सब प्रसन्न रहें एवं प्यार करें । एक और बात ध्यान रखने की है

'संश्रुतेन गमेमहि, मा श्रुतेन विराधिषि ।'

हम जो कुछ पढ़ें सुनें, उसके अनुकूल जीवन यापन करें, जो पढ़ा हो, सुना हो, उसके विपरीत

आचरण कभी न करें ।

ये कुछ विन्दु ध्यान में रहने से देव मण्डली हमसे प्रसन्न रहेगी। हम देवों में प्रिय बने रहेंगे ।

अब द्वितीय खण्ड है -

(२) प्रियं राजसु मा कृणु - हमें राज पुरुषों में प्रिय करो अर्थात् राजा या राजा के लोग, राज व्यवस्था में लगे हुए लोग हमें प्यार करें । राजा और राजपुरुष उसे प्यार करेंगे जो राजकार्यों में सहयोगी हो । नागरिक का कर्तव्य है कि वह नियम-कानून विधि-विधान का पालन करे । राज्य के कोप क्रोध के पात्र वे बनते हैं जो राज्य के विधि नियम को नहीं मानते, उन्हें तोड़ते हैं । ऐसे लोग राजपुरुषों में प्रिय पात्रता नहीं प्राप्त कर सकते । राज्य का विधि सम्मत कर-टैक्स का समय से भुगतान करना भी राज का प्रिय बनाता है । कभी आयकर इतना भयानक था कि उसे नियम पूर्वक अदा करने वाले को कुछ बचता ही न था । यह तो राजनियम ही राज विरोधी था । कभी कभी राष्ट्रों में युद्ध की स्थिति आ जाती है। उस समय युद्ध प्रयासों का सहयोग उचित कर्तव्य है ।

यदि हम क्षत्रिय हैं तो क्षत्रिय धर्म का पालन करना और यदि ब्राह्मण हैं तो देश में वीरता का वातावरण बनाना राज के अनुकूल कर्तव्य है । स्व० प्रकाश वीर शास्त्री को भाषण के दौरान बोलते सुना था कि जब युद्ध का शंखनाद हो जाय, मारू बाजे बजने लगें तो सैनिकों में वीर भाव, विजय भाव उत्पन्न करना ब्राह्मण का ही कर्तव्य कर्म है । यदि वैश्य है तो देश के साथ खड़े हो जाना, आवश्यकता आ जाय तो ब्राह्मण समर्थ गुरु रामदास, क्षत्रिय शिवा और प्रताप, कवि कण्ठों से वीर रस फूट निकले । वैश्य भामाशाह बनकर अपनी तिजोरियाँ राष्ट्र को अर्पित कर दें । शूद्र, सेवक, चतुर्थ श्रेणी के हों तो अपने कार्य को ईमानदारी से करते रहना ही राज सेवा है । यही राष्ट्र की रक्षा में सहयोग भी है । इस प्रकार के आचरण से हम राज में प्रिय बने रहेंगे ।

शूद्र का प्रसंग उठने पर एक स्पष्टीकरण उपयोगी जान पड़ता है । प्राचीनकाल में शूद्र कोई अपमान का सूचक शब्द नहीं था, सांस्कृतिक मर्यादा में सेवक घृणा का पात्र न था । आज भी चाहे, पूँजीवादी व्यवस्था हो या समाजवादी, समाज को मोटे तौर पर चार वर्गों में विभक्त, स्वतः विभक्त, सर्वत्र देखा जा सकता है । (१) एक वर्ग बुद्धिजीवी है । केवल पढ़ना पढ़ाना ही नहीं, सारा संचारतंत्र, प्रबंधतंत्र इत्यादि में ये लोग होते हैं। ये तथा कथित बुद्धिजीवी, मसिजीवी यदि अपने कर्तव्य के प्रति समर्पित हों, कर्तव्यबाधित हों, तो ये वृत्या ब्राह्मण ही हैं । (२) इसी प्रकार रक्षा-सुरक्षा, शान्ति सुव्यवस्था इत्यादि में लगा वर्ग यदि अपने कार्य-कर्तव्य का व्रत लेकर समर्पित हो तो यह क्षत्रिय वर्ण है । (३) उत्पादन - व्यवसाय में लगा वर्ग, राष्ट्र की संपति का विस्तार करने वाला वर्ग वैश्य वर्ण है । इन तीनों वर्गों को सेवक चाहिए । जिन्हें हम चतुर्थ श्रेणी का कर्मचारी कहा करते हैं। वर्णश्रम व्यवस्था में इसी को शूद्र की संज्ञा दी जाती है । इनमें भी थोड़ी गम्भीरता से विचारने पर तीन उपभाग बन जायेंगे । कुछ सेवक विद्या, पुस्तक, पुस्तकालय में अधिक रुचि से काम करते हैं । कुछ वीर वृत्ति के सेवक युद्ध, अस्त्र-शस्त्र आदि

में अधिक रुचि लेते हैं । इसी प्रकार कुछ सेवक उत्पादन व्यवसाय में रुचि लेते है । सो शूद्र वर्ग-सेवक वर्ग भी, तीन प्रकार का होता है, ब्राह्मण सेवक, क्षत्रिय सेवक और वैश्य सेवक ।

अब हम चतुर्थ खण्ड को पहले लेते है, तृतीय खण्ड पीछे लेंगे।

(४) उत् शूद्रे उतार्ये - चाहें शूद्र हो या अर्य/आर्य हों । उत् + अर्य = उतार्य और उत + आर्य = उतार्य । किन्तु यहाँ अर्य अधिक सटीक लग रहा है । अर्य का अर्थ है स्वामी और वैश्य, **'अर्यः स्वामि वैश्ययोः'** । देव ब्राह्मण, राजस क्षत्रिय का नाम तो आ लिया । अब वैश्य आना चाहिए। सो यहाँ वैश्य अधिक सटीक है। अर्थ हुआ - हमें वैश्य और शूद्र प्यार करें, प्रिय समझें ।

वैश्यों में प्रिय - वैश्य कार्य कुशल और व्यवहार कुशल होते हैं । एक तो हम लेन-देन में साफ रहें । उधार का लेनदेन और वायदा खिलाफी ग्राहक को प्रिय नहीं बनाती । दूसरी बात यह भी है वैश्यों में धर्म वृत्ति, दान वृत्ति औरों की अपेक्षा अधिक होती है। उनके धर्म का उपदेश, दान और लोक कल्याण में धन का सदुपयोग उनके स्वभाव व रुचि के अनुकूल बैठता है । दान दाता का कल्याण परमेश्वर का सत्य आश्वासन है, उस आशय का निम्न मन्त्र हृदय में खूब रमता है -

'यदङ्ग दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि ।

तवेत्तत्सस्यमंगिरः ।।' ऋ० १-१-६

अर्थात् हे प्रभो । आपका तो सत्य आश्वासन है कि देने वाले का आप कल्याण करते हैं ।

इसी प्रकार किन आचरणों से धन कमाने में सहयोग मिलता है -

'उत्साह सम्पन्नमदीर्घसूत्रं क्रियाविधिज्ञं व्यसनेष्वसक्तम् ।

शूरं कृतज्ञं दृढ़ सौहृदं च लक्ष्मीः समायाति निवास हेतोः ।।'

अर्थात् जहाँ (१) उत्साह सम्पन्न (२) शीघ्र कृतकारी (३) कार्य की विधि का जानकार (४) व्यसनों से रहित (५) शूर (६) कृतज्ञ (७) दृढ़ मित्र, ये सात गुण बसते हैं, वहाँ लक्ष्मी स्वयं निवास करने के लिए आ जाती है। जहाँ इस प्रकार के व्यवहार किये जाते हैं, वहाँ प्रियता स्वयं उत्पन्न हो जाती है । इस प्रकार वैश्यों में व्यक्ति की प्रियपात्रता बनी रहती है ।

शूद्रे मां प्रियं कृणु - हमें हमारे सेवक भी प्यार करें, यह लिखकर भगवती श्रुति ने जैसे इस प्रसंग का अन्तिम, सर्वोच्च कथ्य कह दिया। प्रायः लोग उन्हें प्रिय लगना चाहते है जिनसे आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि लौकिक लाभ होते हैं । किन्तु जो हमारे कृपा पात्र बनना चाहते हैं, जो हमसे उपकृत होना चाहते हां, उन्हें प्यार करना, हमारे चरित्र की ऊँची भूमि है । हमसे जो बलवान् है, धन, विद्या, सामाजिकता, प्रभाव आदि में ऊपर हैं, उन्हें हम चाहकर और अनचाहे भी प्यार श्रद्धा, आदर करते हैं । किन्तु घर का सेवक, बासन, बर्तन, मांजने धोने वाली, आफिसरा के चपरासी को कौन स्नेह का पात्र समझता है ? हमें व्यक्तिगत रूप से एक घटना का पता है। एक दिन एक ड्राइवर एक सम्पन्न व्यापारी के घर से हमें लेकर मेरे घर मुझे छोड़ने आ रहा था।

मार्ग में हमने उससे उसके घर परिवार का समाचार पूछा । उसने बताया कि पुत्री का विवाह पड़ा है । मैं कुछ और पूछूँ इससे पूर्व उसने स्वयं बताया कि हमारे बड़े बाबू इतने उदार हैं कि मैं ६० हजार अग्रिम (Advance) मांगने गया तो बोले एडवांस कहाँ से चुकाओगे । ड्राइवर संकोच से सिर झुकाकर बोला, 'अपने महीने से कोशिश करूँगा ।' सेठ ने उसे ६० हजार रु० सहायता में दिला दिये, लौटाने का कोई प्रश्न ही नहीं । सेवक के सुख दुःख का ध्यान रखें, उनके भले कल्याण का ध्यान रखें। स्नेह, प्यार, श्रद्धा आदि के भी बीज होते हैं । आप प्यार देंगे तो वहां भी प्यार उगेगा । एक बार मेरे पिता जी को हलका सा ज्वर था । हलवाहा आया, किसी से जान लिया कि मालिक को ज्वर है । स्वयं हल जोतकर आया था, थका था । किन्तु जानवरों को चारा दिया, दूसरी बार भी आया और बैलों की संभाल कर गया । पिताजी ने उसका ५० रु० का कर्जा माफ कर दिया । ५०-५५ वर्षों पहले की बात है । रु० गांव के विचार से कम न थे । वह सारा जीवन पिताजी का, पीछे हमारा भक्त बना रहा। उनके हृदयों मे आपके लिए आत्मीयता हो । आपके भोज मे आपके नाई, धोबी, नौकर खाने आये हों और आप सबको सम्मानपूर्वक मिठाई आदि कुछ पूछ लें । आपके लिए प्यार पैदा हो जायेगा । यह चरित्र की, हमारी मानवता की ऊंची बात है। अपने से बड़ों का, विद्वानों का, धनवानों, प्रभावशाली नेताओं का सम्मान करना सामान्य बात है । किन्तु जो अपने आश्रित ह, छोटे हैं, निर्धन हैं, निर्बल हैं, आपकी कृपा के पात्र ह, उनकी प्रसन्नता का ध्यान रखना ऊँचे चरित्र की बात है ।

आत्मवत् सर्व भूतेषु यः पश्यति स पण्डितः ।

X X X X

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ।

हम अपने लिए प्यार चाहते हैं, सम्मान चाहते हैं, वही हम दूसरे को दें तो वे हमें चाहेंगे, वे हमें प्यार करेंगे ।

(३) अब तृतीय खण्ड पर आते हैं -

'प्रियं सर्वस्य पश्यतः' - सभी जो हमें देखें वे प्यार करें । यों तो इस खण्ड का अन्वय **'उतशूद्रे उत आर्ये'** के साथ ही है । किन्तु हमने थोड़ी सी स्वतंत्रता लेकर इसे अलग खण्ड बना लिया है । अब इसकी सीमा में पशु पक्षी आदि भी सम्मिलित हो जाते हैं । मनुष्यों का प्यार और प्रियता सभी समझते हैं । चरवाहों को उनकी गायें, गड़रियों को उनकी भेड़ें इतना प्यार करती है कि उसकी टेर भी समझती हैं । कुत्तों को खिलाने - पिलाने टहलाने के लिए भी नौकर होते हैं, किन्तु स्वामी का प्यार, उसका सहला देना, थपकी लगा देना, कितना प्रिय है । इन पशुओं को भी मंत्र कह रहा है कि 'सर्वस्य प्रियं' सभी का प्रिय, कोई कैसे बन सके ?

बृहदाण्यक उपनिषद के एक प्रसंग में ऋषि याज्ञवल्क्य अपनी पत्नी से कहते हैं -

'आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियम् भवति ।'

अपनी कामना की पूर्ति के लिए सब प्रिय होते हैं । संसार की एक सच्चाई है, पत्नी के लिए पति, पति के लिए पत्नी, कामना के लिए ही पुत्र या परिवार, धन सम्पति सब प्रिय होते है । चौंकना नहीं चाहिए । कामना आध्यात्मिक और श्रेयस्करी भी होती है । मनुष्य मूर्खों की भाँति मोह ग्रस्त न हो, अध्यात्म साधना, विद्यासाधना, परोपकार आदि सब मंगल कार्य गृहस्थी कर सकता है, अच्छी तरह कर सकता है । ऋषि ने गृहस्थाश्रम को मोक्ष तक साधना का भी आश्रम कहा है । गोस्वामी तुलसीदास का एक पद है -

'जाके प्रिय न राम वैदेही ।

सो छाड़िए कोटि वैरी सम, यद्यपि परम स्नेही ।'

आप राम वैदेही के स्थान पर आत्म कल्याण कर लें ।

'आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति' इसी को दूसरी दिशा, दूसरे की ओर से देखे तो **'अहं तेषां कामाय प्रियं भवामि'** में किसी का प्रिय कब होता हूँ ? जब मैं उसकी किसी कामना की पूर्ति करता हूँ । **'प्रियं सर्वस्य पश्यतः'** सब का प्रिय लगूँ - की आकांक्षा है कि मैं सबकी किसी न किसी कामना की पूर्ति करूँ । भौतिक, बौद्धिक, आध्यात्मिक सब प्रकार की कामनाएं है । भौतिक कामना पूरक की अपेक्षा बौद्धिक कामना पूरक अधिक सम्मान्य, आध्यात्मिक कामना पूरक उससे भी अधिक प्रिय, श्रद्धास्पद है । श्रद्धा प्रियता का ही उच्चतम रूप है ।

प्रियता के पीछे कोई न कोई कामना की पूर्ति प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से रहती ही है । माँ अपने बच्चे को प्यार से तैयार करके पढ़ने के लिए भेजती है । उसे सजाती हैं, नहलाकर, स्वच्छ, सुन्दर वस्त्र पहनाकर भेजती है । बच्चा उसे प्यारा लगता है । सुरूप हो या कुरुप, सभी बच्चे अपनी अपनी माताओं को प्रिय लगते हैं, क्योंकि वे माता के वात्सल्य की आकांक्षा की पूर्ति करते हैं । कभी-कभी, सुअर के छौने, बकरियों के मेमने, और, तो और सहृदय व्यक्ति को तो सिंह और भेड़ियों के बच्चे भी उछलते कूदते, कुलांचे भरते प्रिय लगते हैं, क्योंकि वे वत्स हैं, सौम्य हैं । कभी -कभी सिंह भी सियार के बच्चों को मारते नहीं, बल्कि प्यार देते हैं । सिंह जैसे निष्ठुर प्राणी में भी वत्सलता होती है । इस प्यार के पीछे वात्सल्य की कामना की पूर्ति होती है ।

इसी प्रकार गुरु जब अपने विषय को परिपूर्ण रूप से जानता है और उसमें अध्यापन की कला भी है अर्थात् ज्ञान की संप्रेषणीयता भी है, उनमें साथ ही गुरुदेव शिष्यों को स्नेह पूर्वक, वत्सलतापूर्वक अध्यापन करते हैं तो शिष्य लोग गुरुदेव को निश्चित ही श्रद्धा करेंगे, ऐसा गुरु शिष्यों में प्रिय होगा । शिष्य जब श्रद्धावान् होगा, प्रणति एवं सेवाभाव से परिपूर्ण होगा तो वह भी गुरुदेव का प्रिय होगा । भगवत्गीता में अर्जुन श्रीकृष्ण के सम्मुख शिष्य भाव से उपस्थित होता है ।

'शिष्यस्तेऽ हं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ।'

श्रीकृष्ण भी सूत्र रूप में बोल देते हैं -

'श्रद्धावान् लभते ज्ञानम् तत्पर: संयतेन्द्रिय:'

और 'तं विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया'

आध्यात्मिकता के क्षेत्र में यह बात और भी गहराई से चरितार्थ होती है। भावनात्मक आत्मीयता से भी प्रियता उत्पन्न हो जाती है । नित्य प्रातः एक श्रीमान् भ्रमण के लिए जाते थे और रास्ते में बैठे एक याचक को १०—२० पैसे देते थे । एक प्रातः संयोग से श्रीमान् को पैसे रूपये कुछ भी लेने का स्मरण न रहा । जब याचक के मांगने पर कुर्ते में कुछ न मिला तो उन्होंने बड़े प्यार से, स्वभाव वश, हाथ जोड़कर बड़े प्यार से कहा 'भाई ! आज माफ करो, आज की भी कल दे दूंगा ।' भिखारी खड़ा हो गया और बोला, 'भाईजी ! आज तो आपने वह दे दिया जो किसी ने कभी न दिया, आपने मुझे भाई कह दिया ।' दोनों आत्मीयता से गद गद हो उठे। सच है -

'दोनों ओर प्यार पलता है'

क्रमशः........

संस्कार विधि पर आधारित टेलीविज़न धारावाहिक लिखवाने का निर्णय

आर्य समाज कलकत्ता ने महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित पुस्तक **'संस्कार विधि'** पर टी० वी० के लिये एक धारावाहिक लिखवाने का निर्णय लिया है, जिससे हमारी युवा पीढ़ी को महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा बताए गए संस्कारों की सही-सही जानकारी हो सके । जो भी विद्वान् या विद्वानों का समूह 'संस्कार विधि' पर धारावाहिक लिखने को इच्छुक हैं, वे सभी विद्वान् आर्य समाज कलकत्ता से सम्पर्क करें । धारावाहिक में महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा बताए गये सिद्धांतों को मनोरंजक ढंग से दिखाया जाएगा जिससे यह सभी उम्र के लोगों के लिये रुचिकर हो । सिद्धांतों से किसी प्रकार का समझौता नहीं होगा । सभी संस्कार विस्तृत रूप में शंका समाधान सहित लिखा जाए । धारावाहिक १०८ कड़ियों या इससे अधिक का हो । इस धारावाहिक पर आर्यजगत् के ५ विद्वानों की समिति इसका निर्णय लेगी । सभी विद्वानों को वर्तमान समयानुसार पारिश्रमिक दिया जाएगा। इस धारावाहिक पर आर्य समाज कलकत्ता का सर्वाधिकार सुरक्षित रहेगा । कॉपी राईट भी आर्य समाज कलकत्ता का ही होगा ।

सम्पर्क -

सुरेश कुमार अग्रवाल - 8240241178
9831847788

भवदीय
आर्य समाज कलकत्ता
मदनलाल सेठ

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का जीवन वृत्त

अध्याय– १

पुष्कर के मेले का वृत्तान्त

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म फाल्गुन कृष्ण पक्ष दशमी को गुजरात में सम्वत् १८८१ में हुआ था । पूरे भारतवर्ष में स्वामी जी का जन्म दिवस मनाया जाता है । इसी अवसर पर आर्य समाज कलकत्ता ने निर्णय किया कि पं० लेखराम द्वारा संकलित एवं आर्य महामहोपदेशक कविराज श्री रघुनन्दन सिंह निर्मल द्वारा अनूदित महर्षि स्वामी दयानन्द का जीवन चरित्र धारावाहिक प्रकाशित किया जाय, इसी शृंखला में प्रस्तुत है यह धारावाहिक जीवन-चरित्र — सम्पादक

(गतांक से आगे)

अध्याय - २

गंगा नदी के तट पर सात वर्ष का जीवन

(फाल्गुन सुदी १, सं० १९२३ से स० १९३० तदनुसार १२ मार्च, १८६७ से सन् १८७३ ई० तक)

स्वामी जी के सुझाव पर विरजानन्द जी से अष्टाध्यायी – पंडित बिहारीदत्त शर्मा जी सनाढ्य, ग्राम दानपुर जिला बुलन्दशहर निवासी, कहते हैं 'जब आरम्भ में स्वामी जी कर्णवास आये उस समय मैं लघुकौमुदी अंबादत्त जी पहाड़ी के पास पढ़ता था । उस समय लोगों ने कहा कि एक क्रिस्तान ऐसा है जो मूर्त्तिपूजा और कौमुद की आदिक ग्रन्थों का खंडन करता है और नहीं मानता । उनको देखने के विचार से हम चार व्यक्ति एक मैं, दूसरे गुरुदत्त, तीसरे मिठ्ठूलाल, चौथे पं० हीरावल्लभ स्वामी जी के पास गये । यहां आनकर शास्त्रार्थ स्वामी जी और हीरावल्लभ का हुआ । प्रतिज्ञा, यह थी कि यदि पराजित हो जायेंगे तो प्रतिमापूजन छोड़ देंगे और यदि तुम हार जाओ तो प्रतिमापूजन करना । हमारे गुरु अंबादत्त ने कह दिया था कि जो हीरावल्लभ कर दे वही हमको स्वीकार है । प्रातःकाल से दोपहर के बारह बजे तक शास्त्रार्थ होता रहा । अन्त को इस सूत्र **'सर्वादीनि सर्वनामानि'** पर हीरावल्लभ परास्त हुआ और उसका पक्ष गिर गया । स्वामी जी ने महाभाष्य के प्रमाण से उसका खंडन कर दिया, जिस पर वह परास्त हो गया । उसने भी सच्चे हृदय से अपने ठाकुर शालिग्राम गंगा जी में फेंक दिये और उसी समय पंडित टीकाराम जी ने भी अपने ठाकुर फेंक दिये और जिस गंगामन्दिर के टीकाराम पुजारी थे और जहां से वेतन पाते थे- उसकी पूजा भी छोड़ दी तथा मन्दिर को त्याग दिया । ठाकुर गोपालसिंह, किशनसिंह व रघुनन्दनसिंह आदि ने प्रतिज्ञा की कि हम यज्ञोपवीत करावेंगे और प्रायश्चित करेंगे । स्वामी जी हमको अर्थात् मिठ्ठुलाल, गुरुदत्त और मुझको उपदेश दिया कि तुम स्वामी विरजानन्द

जी के पास जाकर मथुरा में अष्टाध्यायी, महाभाष्य पढ़ो । पांच वर्ष में ऐसे पंडित हो जाओगे कि जिला बुलन्दशहर, अलीगढ़ में कोई तुम्हारे सामने बोलने वाला न होगा । गुरुदत्त तो गया नहीं परन्तु मिट्ठुलाल यज्ञोपवीत के संस्कारों से १५) दक्षिणा लेकर पढ़ने को चले गये । एक बार वह चार अध्याय अष्टाध्यायी के पढ़कर आये । हमसे कुछ भी बात उनके सामने न बन सकी जिससे हमको बड़ी ग्लानि हुई । वह फिर भी गये और शेष चार अध्याय पढ़े परन्तु खेद है कि फिर स्वामी विरजानन्द जी का शरीर छूट गया ।

अनूपशहर की घटनाएँ

स्वामी जी ठाकुरों का यज्ञोपवीत कराकर अनूपशहर में आये और रविशंकर गुजराती तथा ब्रह्माशंकर गुजराती, दोनों उनके शिष्य हुए और संध्या-गायत्री आदि स्वामी जी से सिखा । अंबादत्त ने (हीरावल्लभ के हार जाने और मूर्तियों के गंगा में फेंक देने का वृत्तान्त सुना तो अनूपशहर में आने पर वह स्वामी जी से फिर मिलने आया) निवेदन किया कि महाराज ! मेरी तो जीविका ही वैद्यक की है और मूर्तियों की प्रतिष्ठा की सौ-दो-सौ की आजीविका है, वह भविष्य में नहीं करुँगा । उसने यह प्रतिज्ञा स्वामी जी के सामने की परन्तु खेद है कि वह अपनी प्रतिज्ञा पर स्थिर न रहा ।

स्वामी जी के चले जाने के पश्चात् कस्बा दानपुर में जाकर उसने गंगामन्दिर की प्रतिष्ठा कराई । स्वामी जी को यह सूचना कानपुर में हरनारायण चौबे द्वारा मिली कि दानपुर में अंबादत्त ने मन्दिर की प्रतिष्ठा कराई । स्वामी जी ने कहा कि हम जब अनूपशहर आयेंगे तब उसे देखेंगे ।

जब इसके पश्चात् अनूपशहर आये और लालाबाबू के कोठी में ठहरे तो हमारे पिता हरदेव सहाय तिवारी भी स्वामी जी से मिलने गये । सात दिन तक स्वामी जी ठहरे। अंबादत्त से बहुत कहा और मिलने के लिए बुलाया परन्तु वह घर से बाहर न निकला और कहता रहा कि हम गृहस्थी हैं, साधुओं के पास नहीं जाते । फिर स्वामी जी अहार की ओर चले गये । गुरुदत्त ने अध्ययनार्थ मथुरा जाने को बहुत कुछ कहा परन्तु अंबादत्त ने नहीं जाने दिया ।

जीवित के श्राद्ध को स्वामी जी द्वारा निर्दिष्ट विधि- पंडित छोटेलाल गौड़ आयु ५५ वर्ष और **पंडित कर्णानन्द गौड़ अनूपशहर निवासी ने ऐसे ही शब्दों में वर्णन किया** 'कि जब स्वामी जी गंगातट पर आकर नर्मदेश्वर के मन्दिर के पास बड़े सती वाले स्थान पर ठहरे तो नगर के लोगों ने उस मन्दिर में पियार अर्थात् धान की छाल डाल दी थी । स्वामी जी दिन को बाहर रहते और शास्त्रार्थ तथा वार्तालाप किया करते । केवल संस्कृत ही बोलते, एक ही लंगोट रखते और सिर के नीचे समस्त शरीर पर गंगारज लगाते थे । सम्भवतः कुछ काल यहाँ रहे । रात को जब तक लोग बैठे रहते, दस ग्यारह बजे तक जागते उसके पश्चात् घर के भीतर चले जाते और उस पियार में घुस जाते और कभी लोग ऊपर कम्बल डाल देते । द्वार की ओर लोगों ने एक खिड़की लगा दी थी । प्रातःकाल उठकर शौच दिशा के लिए जाते, कोई पात्र न रखते थे । स्नानादि के पश्चात् वहाँ आ जाते और लोग भोजन का प्रबन्ध कर देते थे । कोई पुस्तक पास न थी । पंडित पन्त सखानन्द पहाड़ी ब्राह्मण व पंडित हीरावल्लभ (स्वर्गीय) पंडित गुरुदत्त व पंडित टीकाराम गुरु (कर्णवास निवासी स्वर्गीय) - इन पंडितों की स्वामी जी

(शेषांश पृष्ठ २७ पर)

सत्यार्थ प्रकाश काव्य सुधा

महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश का काव्यानुवाद

– पं० देवनारायण तिवारी 'निर्भीक'
मो0 : 9830420496

(१६वीं कड़ी)

प्रथम समुल्लास (गत अङ्क से आगे)

(आप्लृ व्याप्तौ) इस धातु से आप्त शब्द सिद्ध होता है ।
''यः सर्वान् धर्मात्मन् आप्नोति वा सर्वैधर्मात्मभिराप्यते
छलादि रहितः स आप्तः ।।''
छन्द - जो छद्म-छल से रहित है, कपटादि दोष न हैं जिसे ।
धार्मिक जनों को प्राप्त होने योग्य है मानें उसे ।।
सत्योपदेशक है वही, औ सकल विद्या युक्त है ।
साधक जनों को प्राप्त होता, और करता मुक्त है ।।१७३।।

हैं वेद सब उपदेश उसके, जो सदा ही आप्त हैं ।
इस हेतु उसको **''आप्त''** कहते, सब कहीं वह प्राप्त है ।।१७४।।

(डुकृञ् करणे) ''शम् पूर्वक इस धातु से ''शङ्कर '' शब्द सिद्ध होता है।
''ये: शंकल्याणं सुखं करोति स शङ्कर
छन्द - जो सर्व सुख की खान है, कल्याण ही करता सदा ।
इस हेतु शङ्कर नाम उसका वेद गाते सर्वदा ।।१७५।।

महत् शब्द पूर्वक **''देव''** शब्द से महादेव शब्द सिद्ध होता है ।
''यो महतें देवः स महादेवः''
छन्द - वह ब्रह्म सर्व महान् देवों का महत्तम देव है ।
उससे न विद्यावान कोई, वह सदा ही सेव्य है ।
रवि, चन्द्र पावक और विद्युत आदि की वह ज्योति है ।
सारे पदार्थों का प्रकाशक, वह विलक्षण द्योत है ।।१७६।।

परमाणु से द्यौलोक तक महिमा उसी की है घनी
सारा जगत् करगत उसी के, वह विराट् महाधनी ।।
उसके नियम में ही चलें जड़ और चेतन देव सब ।।
वह महादेव'' महान् है, इस हेतु माने उसे सब ।।

(चेतन उसे मानें सदा, चित से करें आराधना ।।
पूजें नहीं जड़ देव बदले में, करें यह साधना ।।) ।।१७७।।

(प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च) इस धातु से **''प्रिय''** शब्द सिद्ध होता है ।

''यः पृणाति प्रीयते वा स प्रियः।।

छन्द- धर्मात्म और मुमुक्षु ओं को वह मुदित करता सदा ।
जो शिष्ट उसको मानते, उनके हृदय-भरता मुदा ।।
वह सर्व पूरक देव उसकी ही करें सब कामना
प्रिय है सदा सब काल में करता सभी को मुद मना ।।१७८।।

उससे अपर दूजा कोई सेव्य है संसार में ।
इस हेतु उसका नाम **''प्रिय''** है, शास्त्र के आगार में ।। १७९।।

(भू सत्तायाम्) स्वयं पूर्वक इस धातु से स्वंयभू शब्द सिद्ध होता है।

यः स्वयं भवति स स्वयंभूरीश्वरः ।

छन्द - जो निज स्वयं ही सिद्ध है, उसका न है माता-पिता ।
इससे **''स्वयं भू''** नाम उसका हैं पड़ा, वह जग जिता ।।१८०।।

(कु शब्दे) इस धातु से **''कवि''** शब्द सिद्ध होता है ।

यः कौति शब्दयति सर्वा विद्या स कविरीश्वरः ।

छन्द- जो वेद द्वारा सकल विद्या का किया उपदेश है ।
जो विश्व वेत्ता है, सकल ब्रह्मण्ड जिसका देश है ।।
जो क्रान्त द्रष्टा है जगत् का काल जिसका दास है ।
है इसलिए परमात्मा का नाम ''कवि'', वह पास है ।।१८१।।

(शिवु कल्याणे) इस धातु से **''शिव''** शब्द सिद्ध होता है । **बहुलमेतन्निर्दशनम् ।।** व्याकरण महाभाष्य में इससे शिवु धातु माना जाता है ।।

जो हैं स्वयं कल्याण रूप अनन्त सुख-भण्डार है ।
देता परम पद (मोक्ष), भक्तों का करे उद्धार है ।।
इस हेतु उसका नाम शिव है, वह दया का सिन्धु है ।
शुभ शान्त प्रिय दर्शी प्रमो है व्योम में ज्यों इन्दु है ।।१८२।।

क्रमशः ....

राजा तेजनारायण सिंह जी

आर्यसमाज कलकत्ता के इतिहास के साथ भागलपुर के प्रसिद्ध जमींदार राजा तेजनारायण सिंह का सम्बन्ध स्वतः ही जुड़ जाता है । आप रईस थे, सम्पन्न थे और स्वामी दयानन्द के भक्त थे । सन् १८८५ ई० में जब आर्यसमाज कलकत्ता की स्थापना हुई तो राजा तेजनारायण सिंहजी आर्यसमाज कलकत्ता के संस्थापक प्रधान बनाये गये । उस समय प्रसिद्ध विद्धान् पं० शंकरनाथ पण्डित आर्यसमाज के संस्थापक उप-प्रधान बने और बाबू महाबीर प्रसाद जी आर्यसमाज कलकत्ता के संस्थापक मन्त्री बने। श्री महाबीरजी भी राजा तेजनारायण सिंह के सम्बन्धी और व्यावसायिक प्रधान कार्यकर्त्ता थे । आर्यसमाज कलकत्ता में उनके सहयोग का श्रेय भी राजा तेजनारायणजी को ही है ।

राजा तेजनारायण सिंह का परिवार भागलपुर में रहता था । इनके पूर्वज लखनऊ में नवाबगंज के रहने वाले थे । यहाँ से कलवार वंश के शाह्र खड़गी दासजी भागलपुर की व्यावसायिक मण्डी में आकर बस गये । खड़गी दास के पुत्र साहु नन्दी लालजी थे । साहु नन्दी लालजी के घर बाबू लक्ष्मीनारायणजी का जन्म हुआ । राजा तेजनारायण सिंहजी इन्हीं बाबू लक्ष्मीनारायणजी के सुपुत्र थे। कलवार क्षत्रिय मित्र की सूचना के अनुसार राजा तेजनारायणजी का जन्म संवत् १९०९ की कार्तिक मास की अमावस्या को गुरुवार के दिन हुआ था । रईस तो ये थे ही । इनके पूज्य पिताजी बाबू लक्ष्मीनारायणजी ने इन्हें गवर्नमेन्ट हाई स्कूल भागलपुर में अंग्रेजी की शिक्षा दिलायी । बाबू तेजनारायणजी बड़े कुशाग्रबुद्धि थे और उन्होंने शिक्षा में अच्छी सफलता प्राप्त की, किन्तु १७ वर्ष की कच्ची आयु में ही आपके पिताजी का शाश्वतिक वियोग हो गया । पिताजी के देहान्त के पश्चात् इस अल्पायु में ही आपको सव तालुकेदारी के काम सम्हालने पड़े । सरकार ने आपको रायबहादुर की पदवी से विभूषित किया । प्रजा-पालन, अपने ताल्लुके में कुआँ, तालाब, नालियाँ, बांध आदि का लाखों रुपयों के व्यय से निर्माण कराया । राजा तेजनारायण जी ने भागलपुर में एक स्कूल भी खोला और राजा तेजनारायण डिग्री कालेज भी भागलपुर में चालू कर दिया । सन् १८८७ ई० में सरकार ने आपको रायसाहब का खिताब दिया था ।

स्वामी दयानन्द के सम्पर्क में :

स्वामी दयानन्दजी सरस्वती कलकत्ता आने से पूर्व भागलपुर गये थे और भागलपुर की सुबुद्ध देश-जाति-प्रेमी जनता पर स्वामीजी के आगमन का अच्छा प्रभाव पड़ा था । ऐसा सहज अनुमान है कि तेजनारायणजी भागलपुर से ही स्वामी दयानन्दजी के मिशन के समर्थक बन गये थे ।

राजा तेजनारायण उदार दानी थे और देशप्रेमी थे । जाति उत्थान की भावना उनमें काम कर रही थी । उस समय कलकत्ता देश की राजधानी थी और बंगाल-बिहार का सारा राजनयिक कार्य कलकत्ता को केन्द्र करके ही चल रहा था । राजा तेजनारायण ने कलकत्ता में मोजे, बनियाइन आदि बनाने का एक कारखाना शुरु किया था और उनकी ओर से यहाँ का कार्य उनके सम्बन्धी बाबू महावीर प्रसादजी देखते थे . वैसें बाबू महावीर प्रसादजी थे तो आर्य-समाज कलकत्ता के मन्त्री, किन्तु राजा तेजनारायणजी का प्रायः कलकत्ता मे रहना कम होता था, अतः बाबू महाबीर ही प्रधानजी भी कहलाते थे ।

आर्य समाज कलकत्ता की सेवा मे :

सन् १८८५ ई० में जब आर्य समाज कलकत्ता की स्थापना हुई और राजा तेजनारायण जी इसके प्रधान बने तो स्वाभाविक ही था कि पं० शंकरनाथ जी जैसे साहित्य-प्रेमी, विद्वान् के सम्पर्क से यहाँ साहित्य का कार्य भी आरम्भ होता । कलकत्ता में आर्य समाज के लिए राजा तेजनारायणजी ने क्या धनराशि दी थी इसका तो कहीं उल्लेख नहीं मिलता, किन्तु सन् १८८७ ई० में जब आर्यावर्त प्रेस ६२ नं० शम्भूनाथ पण्डित स्ट्रीट, कलकत्ता में खुला तो राजा तेजनारायणजी ने २०,००० रुपये आर्यावर्त प्रेस और पत्र के लिए दिये थे । यह भी सुना जाता है कि देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्यक्ष को ऋषि की जीवनी की सामग्री एकत्र करने के लिए राजा तेजनारायण जी ने १०,००० रुपयों की राशि प्रधान की थी ।

राजा तेजनारायण जी उदार विचारों के सुधारवादी रईस थे । आपने विद्यालय में भी कारबार आरम्भ किया । आप सन् १८९८ ई० में इंग्लैण्ड-योरोप की यात्रा पर गये । ११ फरवरी सन् १८९८ ई० को आप इंग्लैण्ड से भारतवर्ष के लिए प्रस्थान करने वाले थे कि उसी दिन अचानक ४७ वर्ष की अवस्था में लन्दन में ही आपका देहान्त हो गया और आर्य समाज कलकत्ता अपने संस्थापक प्रधान उदार रईस राजा तेजनारायण जी की सेवाओं से वंचित हो गया ।

राजा तेजनारायण सिंह और देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय कृत स्वामीजी का जीवन-चरित्र :

स्वामी दयानन्द एक ही बार कलकत्ता आये थे और लगभग चार मास रहकर चले गये थे । फिर बंगाल की दूसरी यात्रा उन्होंने की ही नहीं । इन चार महीनों के कलकत्ता प्रवास का कई प्रकार से ऐतिहासिक महत्त्व है । यहाँ के प्रबुद्ध वर्ग पर उनके विचारों का अच्छा प्रभाव पड़ा था । बंगाल के विद्वत्समाज में सामाजिक और साहित्यिक चेतना बहुत पहले से रही है । ऋषि के आरंभिक जीवनचरित्रों में श्री नगेन्द्रनाथ चट्टोध्यायकृत स्वामी दयानन्द की संक्षिप्त जीवनी सन् १८८६ ई० में प्रकाशित हुई थी। फिर श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय स्वामी दयानन्द के जीवन की ओर आकृष्ट हुए । श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय धर्म की दृष्टि से ब्राह्मसमाजी थे , किन्तु स्वामी दयानन्द के अद्भुत भक्त थे । स्वामी दयानन्द की जीवनी लिखने से पूर्व उन्होंने सेन्टपाँल की जीवनी लिखकर जीवनचरित्र लेखन-कला की दृष्टि से अच्छा यश प्राप्त किया था । श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय ने स्वामी दयानन्दजी का जीवनचरित्र बंगला भाषा में दो खण्डों में प्रकाशित किया । यह सन् १८९८ ई० में प्रकाशित हुआ था । राजा तेजनारायण सिंह आर्यसमाज कलकत्ता के संस्थापक प्रधान थे और उन्होंने देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय को आर्थिक सहायता प्रदान की । यद्यपि यह देवेन्द्रनाथजी के अन्वेषण एवं परिश्रम का पारिश्रमिक न था, किन्तु उस सहायता से देवेन्द्रनाथजी के कार्य में निश्चित ही सुविधा आयी थी । देवेन्द्रनाथजी ने सम्पूर्ण में उन स्थलों को जाकर देखा और लोगों से सम्पर्क कर ऋषि के जीवन की सामग्री एकत्र की । यद्यपि अपनी एकत्र की हुई सामग्री को विधिवत् जीवनचरित्र का स्वरूप देने से पूर्व श्री देवेन्द्रनाथजी का देहान्त हो गया, और यह कार्य मेरठ के प्रसिद्ध विद्वान श्री घासीरामजी ने किया । यहाँ हमारा इतना ही आशय है कि आर्यसमाज कलकत्ता के आर्यगण ऋषि-जीवन के प्रकाशन में रुचि भी रखते थे और सलयोगी भी बने थे ।

(आर्य समाज कलकत्ता के शतवर्षीय इतिहास से)

योग दर्शन का विभूति पाद प्रक्षिप्त नहीं है

- सुखदेव व्यास

भारत के ६ दर्शन विश्व प्रसिद्ध है । न्याय, वैशेशिक, योग दर्शन, सांख्य, पूर्व मीमांशा, उत्तर मीमांशा । इन्हें वेदों के उपांग कहते हैं । इन दर्शनों में संपूर्ण विश्व ही क्या ब्रह्मांड का ज्ञान निहित है। इन दर्शनों में योग दर्शन अत्याधिक विख्यात ग्रंथ है । इन दर्शनों से पदार्थ ही क्या संपूर्ण शक्तियों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है और उनका विश्लेषण कर सकते हैं ।

योग दर्शन में विभूति पाद एक महत्वपूर्ण अध्याय है । इस पाद में मानव द्वारा अप्रत्याशित शक्तियां प्राप्त करने के सूत्र दिए गए हैं । सूत्र का अर्थ होता है - कूट वाक्य या शब्द जिसमें कूट कूट कर ज्ञान और अर्थ भरा हो और उसका विश्लेषन कर विस्तार किया जाकर ज्ञान हासिल करना और उससे संसार की समस्याओं का समाधान करना । जिस प्रकार गणित के सूत्रों से सवाल हल किए जाते हैं, उसी प्रकार योग दर्शन तथा अन्य दर्शनों से मानव जीवन के प्रश्नों का समाधान किस प्रकार हो सकता है उस पर विचार किया गया है और मानव कौन-कौन सी शक्तियां प्राप्त कर सकता है । इन शक्तियों के सूत्रों को देख कई लोग इस योग दर्शन के विभूति पाद के कुछ सूत्रों को काल्पनिक मानकर इसे प्रक्षिप्त मानते हैं । लेकिन यह पाद प्रक्षिप्त नहीं वरन सर्वश्रेष्ठ शक्तियों से परिपूर्ण है ।

महर्षि पतंजलि भारत के महान वैज्ञानिक थे । उन्होनें वेदों का गहन अध्ययन कर, मानव जीवन की समस्याओं का समाधान करने के लिए योग दर्शन की रचना की । योग दर्शन में चार पाद हैं और १९५ सूत्र दिए गए है । महर्षि ने वेदों के तत्व को समझ कर ही सूत्रों की रचना की । वैसे तो संपूर्ण योग दर्शन महत्वपूर्ण हैं । विभूति पाद में जो शक्तियां दी गई है उसे हम किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं उसका विश्लेषण इन चारों पादों में किया गया है । विभूति पाद को समझने के लिए हमारी दृष्टि भी वैज्ञानिक होना चाहिए । जब ही हम इस पाद को समझ सकते हैं । इस दृष्टि को प्राप्त करने के लिए ही विभूति पाद का सृजन किया गया है । अगर हमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्राप्त करना हो तो हमें योग दर्शन में जो जीवनचर्या दी है उसे अपनाना होगा । सबसे पहले हमें यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार के द्वारा स्वस्थ्य जीवन प्राप्त करना होगा । स्वस्थ शरीर में ही उत्तम विचार आ सकते हैं । उत्तम विचार जब होगे तो ही ईर्ष्या,द्वेष, मोह, असत्याचरण, आदि का त्याग हो सकता है । शरीर स्वस्थ होने पर ही धारणा ध्यान समाधि सिद्ध हो सकती है । और इस विभूति पाद में वर्णित शक्तियों को प्राप्त कर सकते हैं । उसके पूर्व हमें धारणा, ध्यान, समाधि पर ध्यान देना होगा । इसके सिद्ध होने पर व्यक्ति में वैचारिक संयम प्राप्त होता है । पतंजलि ने कहा है **''त्रयमेकम संयम, धारणा, ध्यान, समाधि इन तीनों को संयम कहा गया है । संयम सिद्ध होने पर - तज्जयात प्रज्ञालोक:, संयम के सिद्ध होने पर - प्रज्ञा अर्थात बुद्धि का प्रकाश होता है ।''** अर्थात वैज्ञानिक बुद्धि प्राप्त हो जाती है, पदार्थ में क्या शक्ति है उसका ज्ञान हो जाता है । उसकी पहचान हो सकती है । विभूति पाद में जो शक्तियां दी गई है वह संयम द्वारा ही प्राप्त

की जा सकती है । जो व्यक्ति चाहता है कि वह शक्ति प्राप्त करे तो उसके लिए पांच महाभूतों की शक्ति पहचानें । पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश इन पंच महाभूतों में अद्भुत शक्तियां है । इन शक्तियों का दर्शन हमें कई बार होता है । आज वैज्ञानिकों ने इस महाभूतों की शक्तियों को पहचान कर तथा उसमें अग्नि शक्ति का प्रयोग कर यंत्रों का निमार्ण किया है । जिसे हम अविष्कार कहते हैं । आज की भाषा में वैज्ञानिकों को योगी की श्रेणी में लिया जामा चाहिए क्योंकि दिन रात भूख प्यास का त्याग क़र संयम के द्वारा अर्थात धारणा, ध्यान,समाधि, एकाग्रता के द्वारा अपनी खोज को सिद्ध करता है । उस समय उसकी भावना लोक हित की ही रहती है । इसिलिए यजुर्वेद के शिव संकल्प ऋषि मन की शक्तियों का वर्णन करते हुए कहते हैं कि मन की शक्तियों को संयमित कर अपने कार्य को सिद्ध किया जा सकता है । वर्तमान के ऋषि वैज्ञानिकों ने पंच महाभूत की शक्तियों की खोज की है इसिलिए पतंजलि ने विभूति पाद का सृजन कर कहा कि- जब तक ज्ञात पदार्थ के तत्वों की खोज, उसके गुण धर्म उसके परमाणु तक नहीं पहुंचा जाता उस पदार्थ की शक्तियों की पहचान नहीं हो सकती । जिस प्रकार दूध की अंतिम शक्ति घी होती है, जब हम दूध से दही, दही से मक्खन और मक्खन से घी बनता हैं उसके बाद विभूति (भस्मी) हो जाती है । पदार्थ की अंतिम स्थिति विभूति या भस्म होती है । पदार्थ की भस्मी होने तक का ज्ञान होना चाहिये तब ही पदार्थ की शक्ति का ज्ञान हो सकता है । योगी या वैज्ञानिक समाधि अवस्था में आने पर अविष्कार करता है । धारणा और ध्यान की अंतिम स्थिति समाधि है ।

विभूति पाद में संयम को अत्यधिक महत्व दिंया गया है । संयम में धारणा, ध्यान, समाधि का ही महत्व है । एक विषय या पदार्थ की धारणा करना उसके परमाणुओं में क्या शामिल है, क्या उर्जा है उस पर विचार, सिद्धांत और निमार्ण तक पहुंचना, सूत्र है बलेषु हस्तिबलादीनि अर्थात हस्ति आदि बलों में संयम करने से हस्ति बल आदि प्राप्त होते हैं । मनुष्य शरीर की क्षमता हाथी के समान बल प्राप्त करने की नहीं है । लेकिन उसका बल किस प्रकार हो सकता है धारणा,ध्यान, समाधि द्वारा ही यह बल प्राप्त किया जा सकता है । वेद कहता है कि यंत्रों में बिजली का संचार करने से शक्ति प्राप्त होती है । इसलिए योगी या वैज्ञानिक लोहे की शक्ति पर विचार करता है । बिजली की मोटर, उसकी अश्व शक्ति द्वारा तारों के तंतुओं में विद्युत उर्जा प्रवाहित की जाती है । बड़ी-बड़ी क्रेनों का निमार्ण कर हाथी से कई गुना वजन उठाया जाता है । हाथी को तौल की ईकाई मानकर इस सूत्र को हल किया गया है और इसी वैज्ञानिक सिद्धांत के आधार पर योगी हाथी के समान बल प्राप्त करता है । आज बड़-बड़े अंतरिक्ष यान हस्तीशक्ति के माध्यम से ही भेजे जा रहे हैं ।

ऐसी शक्ति को प्राप्त करने के लिए मन की ज्योतिष्यति अर्थात वैज्ञानिक बुद्धि के द्वारा ही नए-नए आविष्कार और खोज की जा सकती है । मन की ज्योतिष्मति बुद्धि से कई रहस्यों की जानकारी प्राप्त की जा रही है ।

इसी प्रकार सूर्य को क्रेंद्र मानकर आज कई लोक लोकान्तरों की खोज की गई है । नए नए ग्रहों

को खोजा जा रहा है जो पृथ्वी से कई प्रकाशवर्ष दूर है । कई ऐसे दूरबीन, कैमरे बनाए गए हैं और ऐसे यंत्र आविष्कृत किए जा रहे हैं जो करोड़ो किलोमीटर दूर से चित्र भेज रहे हैं, ग्रहों के उपर के पर्वत, नदियां, वातावरण की जानकारी प्राप्त की जा रही है । इसी प्रकार चंद्रमा को केंद्र मानकर तारा मण्डल, आकाश गंगा का, ध्रुव तारा उसकी इतनी दूरी है कि वह स्थिर दिखाई देता है, उसे केंद्र मानकर गति का ज्ञान प्राप्त किया जा रहा है और उसके जानने की साधन आविष्कृत किए गए है । मानव शरीर के नेत्रों की इतनी शक्ति नहीं है कि वह सैकड़ों किलोमीटर की वस्तु को देख सकें लेकिन वह साधनों के द्वारा देख सकता है । इसलिए दिव्य दृष्टि प्राप्त होना कहा जाता है जो योगी वैज्ञानिक ही देख समझ सकता है ।

इसी प्रकार शरीर रचना में नाभि चक्र के माध्यम से शरीर की रचना का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है । आज शरीर रचना की जानकारी के लिए कई यंत्रों का निर्माण हो चुका है और नाड़ी जो नाड़ियाँ जा रही है उसे यंत्रों से देखकर कहां खराबी है वह जानी जा सकती है । धारणा, ध्यान, समाधि द्वारा कई यंत्रों का आविष्कार किया गया है उससे शरीर की आंतरिक जानकारी प्राप्त हो जाती है । नाभि चक्र को माध्यम बनाकर शरीर के अंग-अंग की जानकारी प्राप्त की जा सकती है । अग्नि तत्व में भी विशाल शक्तियां हैं उसकी उर्जा से मोबाईल से दूर-दूर तक की बातें सुन सकते है, दूरदर्शन पर दूर-दूर के दृश्य देखे जा सकते हैं, यह सब अग्नि तत्व से ही सिद्ध हुआ है । यंत्रों में विद्युत का प्रयोग हर असंभव को संभव कर चुका है । स्थूल से सूक्ष्म तक का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है । सामवेद कहता है- **अग्नि दूतं वृणीमहे ।** हवा में वायुयान द्वारा कहीं भी पहुंचा जा सकता है । यह सब पंचमहाभूतों से ही सिद्ध हो रहे हैं । एक छोटी से चिप, मेमोरी कार्ड में हजारों ध्वनि, रेकार्ड, चित्र संग्रहित किए जा सकते हैं।

योग दर्शन में अदृश्य होने का सिद्धांत दिया गया है । जिस प्रकार बादल के कारण सूर्य दिखाई नहीं देता, उसी प्रकार मनुष्य भी अदृश्य हो सकता है । ऐसा आवरण बनाया जावे और गैस का ऐसा आवरण छा जाए कि सामने की वस्तु या मनुष्य दिखाई न दे । ऐसे वस्त्र बनाए जा सकते हैं जिससे ऐसी गैस निकलती हो और प्रकाश की किरणें प्रविष्ट न कर पाए तो व्यक्ति अदृश्य हो सकता है ।

योग दर्शन के विभूति पाद के ५५ सूत्रों की वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन की आवश्यकता है । उसी प्रकार वैशेषिक दर्शन जो पदार्थ के स्वभाव को बताता है, उन सूत्रों के गहन अध्ययन की आवश्यकता है । उसी प्रकार दग्ध बीज का तात्पर्य ही यही है कि पदार्थ की शक्तियों की खोज करते-करते अंतिम चरण तक पहुंचना जहां कुछ भी जानना शेष न रह जाए केवल अंतिम स्थिति विभूति रह जाए जिसके आगे कुछ प्राप्त करना न रह जाए, उसके आगे मात्र ईश्वरीय शक्तियों का ही दर्शन हो जाएगा । आगे पतंजलि ने चेतावनी दी है कि इन साधनों का अत्यधिक उपयोग व्यक्ति को भटका देता है और घमंड में आकर सृष्टि का विनाश करने पर तुल सकता है । इन शक्तियों के आगे केवल ईश्वरीय शक्तियां है जिसे पाकर व्यक्ति को कुछ भी पाना शेष नहीं रह जाता है और मानव जीवन का उद्देश्य पूर्ण हो

जाता है ।

योग दर्शन में कुछ भी प्रक्षेप नहीं है । इन सूत्रों को वैज्ञानिक दृष्टि से देखने पर सभी समस्याओं को हल किया जा सकता है । आज ज्योतिष का इतना विकास हुआ है कि ग्रहों तारों की गति का सूक्ष्म अध्ययन, दूरस्थ स्थानों की दिव्य वाणी, दिव्य दर्शन करना हमारे हाथ में हैं । चिकित्सा विज्ञान का विकास लोक लोकांतर को हम कैमरों, कम्पयुटर के माध्यम से अपनी उंगलियों से छू सकते हैं । आज बड़ी-बड़ी चट्टानों को हिला दिया जाता है, परमाणु विस्फोटों से धरती पर भूकंप आ जाते हैं । पल भर में सारे निर्माण को नष्ट किया जा सकता है । रोबोट से मनचाहे काम लिए जा सकते हैं, परखनली और क्लोन पद्धति से मानव ही क्या पशु तैयार कर दिए गए है । पंचमहाभूतों से कई आविष्कार किए जा रहे हैं और बिगड़ भी रही हैं ।

योग दर्शन का वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन कर प्रत्यक्ष कर्माभ्यास, धारणा, ध्यान, समाधि द्वारा हम पदार्थ की शक्तियों को पहचान सकते है । इंद्रियों पर नियंत्रण कर परमात्मा की सृष्टि का आनंद लिया जा सकता है । परंतु जितनी मानव देह की शक्ति है उतना ही उपभोग करें, अन्यथा समय से पूर्व नष्ट होना निश्चित है । यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि की साधना करने पर ही हम इन विभूतियों का आनंद ले सकते हैं । वैराग्यपूर्ण भोग करना, इसमें लिप्त न होते हुए, त्याग भावना से आनंद लिया जाना चाहिए । हमारे जीवन का मुख्य लक्ष्य मोक्ष और ईश्वर साक्षात्कार करना है ताकि हम ईश्वर के माध्यम से विशाल सृष्टि का आनंद ले सकें ।

अनन्त सुंदरम भवन
१८, जहाजगली, उज्जैन, मध्यप्रदेश
मोबाईल नंबर ९०३९१८२४८९

आर्य समाज श्रृंगारनगर में ईसाई का शुद्धि-संस्कार

दिनांक १५ अगस्त, २०१८ को आर्य समाज श्रृगारनगर, लखनऊ में एक ३२ वर्षीया ईसाई युवती केरन रैस्कर का शुद्धि-संस्कार करके वैदिक धर्म में दीक्षित किया गया और नया नाम **'कृति'** रखा गया ।

मन्त्री
राकेश माहना
आर्य समाज श्रृंगारनगर, लखनऊ

कवियों की उपेक्षिता उर्मिला

- परीक्षित मंडल 'प्रेमी'

संसार की साध्वी नारियों में सतीशिरोमणि उर्मिला का स्थान सर्वश्रेष्ठ है । इन्होंने विवाह के बाद जिस एकाग्रता, तन्मयता और तत्परता से अपने पति लक्ष्मण की प्रतिक्षा की है, वह भारतीय इतिहास में स्वर्णाक्षिरों में अंकित है । इनके विमल विशद पावन चरित्र और इनके नाम को स्मरण करते ही पतिव्रत्यधर्म का माहात्म्य सजग हो उठता है । हिन्दू समाज में प्रत्येक नारी के मन मानस पर इनका अक्षुण्ण प्रभाव है । वे सब इनसे दिव्य प्रेरणा प्राप्त करती हैं । वे परंपरागत मर्यादा, नैतिक आदर्श और दाम्पत्य जीवन की एकनिष्ठता एवं पवित्रता की प्रतिमूर्ति हैं । अपने एकनिष्ठ पातिव्रत्यधर्म, तप, त्याग और सहनशीलता आदि सर्वतोभद्र गुणों की पराकाष्ठा होने के कारण सती उर्मिला का भव्य चरित्र सामान्य नारी चरित्र से बिल्कुल एक अलग दिव्य चरित्र बन गया है । इनके तप, त्यागमय तथा करुणामय चरित्र की महिमा की सराहना इदमित्थं नहीं किया जा सकता है । पति का सतत आनन्दमय, सुषमामय सुख चिन्तन इनका एकमात्र धर्म है । इनका प्रत्येक कर्म पति के प्रति आत्मार्पित है ।

यह ज्ञातव्य है कि तमसा नदी के सुरम्य तट पर काम मोहित क्रौंच पक्षी के जोड़े में से एक पक्षी को व्याध द्वारा वध किया गया देखकर जिस आदिकवि वाल्मीकि का हृदय दुःख से विदीर्ण हो गया और जिनके मुखारविन्द से - मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।

यत्क्रौंच मिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ।।

पूतवाणी सहसा निकल पड़ी । वही दुःख कातर आदिकवि रामायण की रचना करते समय एक सुभग, पतिप्राणा, नवपरिणीता, दुःसहदुःखिनी उर्मिला वधु को बिल्कुल भूल गया और विरह विदग्ध ज्वरतप्त सहधमिणी होने पर भी इनके दारूण दुःख विजड़ति जीवन की खबर तक न ली । पति के सुदीर्घ जीवन मंगल के लिए इनके हृदय कुम्भ में तपःपूत रस आप्लावित है, मनः क्षितिज पर चारू चन्द्रिका की निर्मल छवि उदासित है, इनके लावण्यमय और ज्योतिर्मय जीवन के लिए आदिकवि की सारस्वत साधना कुण्ठा विजड़ित क्यों रह गई । तिग्मतेजोदीप्त वीरांगना, चन्द्रमुखी, सुलक्षणी, मृगनयनी, पिकवयनी, हंस गामिनी, गृहवासिनी, साध्वी उर्मिला के अपार शील सौन्दर्य के प्रत्यांकन में आदिकवि की पारस लेखनी मौन साधकर क्यों रह गई ? अपने प्रवासी पति की सतत अन्तहीन प्रतीक्षा में विरहिनी उर्मिला की स्थिति मकरन्द रहित रसहीन पुष्प एवं कलाहीन शशि और लालिमा विहीन संध्या के समान दयनीय हो गई है । विरह विदग्ध श्वास से वह कभी भी आह निकलने नहीं देती । पति के पास चौदह वर्षो तक न होने पर भी पति के प्रति इनका प्रेम कतई कम नहीं होता । इनकी मंगल कामना है कि जहाँ भी इनका पति रहे, वह सुखी रहे । फिर इनकी त्रासदपूर्ण जिन्दगी का आदिकवि ने चित्रण क्यों नहीं किया ? जबकि आदिकवि ने राम का प्रतिनायक लंकाधिराज रावण में भी दो- एक गुण दिखाकर हमें आकर्षित किया है । महर्षि वाल्मीकि ने कैकेयी में भी राम के प्रति निश्छल स्नेह का चित्रण किया है । इनकी पूतदृष्टि में असुराधिप रावण, कुम्भकरण और खर-दूषण भी मानवीय गुणों से वंचित नहीं हैं । शूर्पणखा भी रावण को नीति धर्म का उपदेश करती है, परन्तु पतिप्राणा उर्मिला में महर्षि प्रवर

ने शुभ गुण और त्यागमय जीवन का अंकन नहीं किया है । क्या आदिकवि को अयोध्या के शोक समुद्र में अभी उर्मिला की कहीं कोई करुण आह श्रवणरन्ध्रों में नहीं सुनाई पड़ी ? जबकि अद्भुत, सरल, प्रेममयी चरित्र में साध्वी उर्मिला के प्रति अल्पादल्पतरा संवेदना का अंकन समीचीन है ।

सौभाग्य सुन्दरी उर्मिला चौदह वर्ष के भीष्मव्रत का निर्वाह करती है । यह इनकी महार्घ महानता है। साध्वी उर्मिला यह जानकर गौरवान्वित हुई कि इनके पति जीवन के महालक्ष्य की पूर्ति में सीताराम के सेवार्थ वन गमन किये हैं, लेकिन यहां कविवरेण्य वाल्मीकि को विरहिणी उर्मिला की सिसक बिल्कुल सुनाई नहीं पड़ी है । हाँ, इन्होंने जनकपुर में उर्मिला को सिर्फ एकबार नवपरिणीता वधू वेष में दिखाकर बिल्कुल खामोश हो गये हैं । संत महाकवि तुलसीदास ने भी उर्मिला पर विचार नहीं किया है । इन्होंने भी उर्मिला को महाकाव्यीय प्रबंध चेतना में प्रत्यांकन नहीं किया है । इन्होंने भी लक्ष्मण के महाभिनिष्क्रमण या वनगमन के वक्त उर्मिला से न मिलने दिया । माता सुमित्रा से मिलने के पश्चात् कविसम्राट तुलसीदास ने रामचरितमानस में स्पष्ट लिख दिया कि **''गये लखनु जहाँ जानकिनाथू ।''** ऐसी उपेक्षा कर आदिकवि वाल्मीकि और कविशिरोमणि तुलसीदास ने सती उर्मिला के उचित अधिकार, विश्वास और सत्त्व पर गहरी चोट मारी है । कविवर द्वय ने उर्मिला की आत्म गौरवमय भावना और स्वाभिमान को शिथिल किया है । महाभारत और पुराणों में उर्मिला का नामोल्लेख मिलता है, लेकिन उर्मिला के पावन चरित्र, व्याकुलता और छटपटाहट का कोई परिचय नहीं मिलता । जबकि उर्मिला ने जीवन की विषम परिस्थितियों में भी अदम्य साहस, जागरुकता, दूरदर्शिता, विवेक, संतुलन, सहिष्णुता, धैर्य, त्याग और सेवा द्वारा अपने सतीत्व का निष्ठापूर्वक पालन किया है । इनमें नारी सुलभ सभी आदर्श गुण प्रदीप्तमान हैं । इनके मन में भी पतिप्रेम सीता से कम नहीं है । फिर भी वे राम के साथ वनगमन में लक्ष्मण के लिए बाधा नहीं बनतीं । उर्मिला द्वारा समस्त सात्विक वृत्तियों के साथ अपने जीवन को लक्ष्मण पर उत्सर्ग करने और उनकी पतवार बनने की अपनी प्रतिज्ञा का अन्त तक पालन ही इनके सतीत्व रूप की सबसे बड़ी उपलब्धि है ।

केवल आधुनिक काल के कावियों ने प्रोषितपतिका उर्मिला के प्रति विषेश सहानुभुति प्रकट की है और इनकी साधना और आँसुओं को उद्धृत किया है । युगीन भावनाओं से प्रेरित होकर सर्वप्रथम कविगुरु रवींद्रनाथ ठाकुर ने 'काव्येर उपेक्षिता उर्मिला' शीर्षक निबंध लिखकर उपेक्षित नारियों को नए काव्य में स्थान देने पर जोर दिया है । इसी निबंध से प्रेरणा लेकर अधीती साहित्यकार महावीरप्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका में 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' एक निबंध लिखा और अर्वाचीन कवियों से उर्मिला का उद्धार करने का आह्वान किया । आचार्य द्विवेदी से प्रेरित होकर मैथिलीशरण गुप्त ने **'साकेत'** और बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने **'उर्मिला'** नाम से एक-एक प्रबंध काव्य लिखा है । यहाँ कवि द्वय ने अपनी कारयित्री अप्रतिम प्रतिभा प्रभा के बल पर सीरध्वजात्मजा उर्मिला की शक्ति, शील, सौन्दर्य, सतीत्व, तेजस्विता और आदर्श नारी रूप को व्यापक फलक पर स्वर और रूप प्रदान किया है । इनमें लोकमंगल की तीव्र आकांक्षा और नारी सुलभ सभी उदात्तगुण पूर्णरूपेण स्पंदित हैं । ममतामयी उर्मिला अपने अनिंद्य सौन्दर्य और आकर्षण का उपयोग भी लक्ष्मण को रोकने के लिए न कर सकी थी, क्योंकि पति की अभिरुचि के विपरीत वे कोई भी आचरण करना अनुचित मानतीं । पति के प्रति इनमें

जो आत्मीयता, धर्मविहित कर्मशीलता और आदर्शोन्मुखी मानवीय चेतना प्रतिबिंबित हुई है, वह अन्यत्र दुर्लभ है । आदर्श पातिव्रधर्म के साथ ही इनमें प्रखर बुद्धिमता और दूरदर्शिता का मणिकांचन योग प्रदीप्तमान है । इसी आदर्शोन मुखी मर्यादा और नैतिक परंपराओं से पोषित, पल्लवित होने के कारण यह नारी जाति की रत्नोपमा बन गई है ।

प्रातःस्मरणीया उर्मिला भारतीय नारी के लिए पातिव्रत्य, सतीत्व, साहस और तेजस्विता का तिग्मतेज प्रतिमान है । फिर भी उर्मिला आजीवन उत्पीड़न, क्रन्दन का पर्याय बनकर रह गई । कामिल कवि 'प्रेमी' ने कहा है-

सुन लो ! उर्मिला एक नाम है पीड़न, कसक, क्रन्दन, रोदन का ।
सुन लो ! उर्मिला नाम युगों से, चिर अश्रुमय उपेक्षण शोषण का ।।

संप्रति नारी मिथकों में उर्मिला का स्थान सर्वश्रेष्ठ है । अतः सर्वमंगला उर्मिला का पुनीत चरित्र हमारे लिए सर्वथा वरेण्य है । क्योंकि तप-त्याग तथा बलिदान की मिसाल, जो इसने प्रस्तुत किया है, वह बेमिसाल है । पुनश्च 'प्रेमी' जी ने कहा है——

हाय : उर्मिला यही तुम्हारे जीवन की करुण कहानी है ।
तेरे अधरों के मधुर गीत में दुःख की बची निशानी हैं ।।

हिंदी अध्यापक, संत फांसिस उच्च विद्यालय,
पोड़ैयाहाट, ८१४१५३ जिला- गोड्डा (झारखंड)
मो० ९१६२२०८००५

सूचना

आर्य समाज सैक्टर २२-ए, चण्डीगढ़ का वार्षिक चुनाव दिनांक १९.८.२०१८ रविवार को सत्संग के बाद सम्पन्न हुआ । दिनांक २१.८.२०१८ को कार्यकारिणी का गठन निम्न रूप में किया गया ।

संरक्षक-	श्री अवनीश चौहान, श्री अशोक पाल जग्गा
प्रधान-	श्री बनी सिंह
उपप्रधान-	श्री सोमदत्त शास्त्री
उपप्रधान-	श्री सुरेन्द्र सिंह
मंत्री-	श्री प्रेमचन्द गुप्ता

''स्वामी जी का मूर्त्तिपूजा पर कड़ा प्रहार, सत्यार्थ प्रकाश में''

- खुशहाल चन्द्र आर्य

मैंने यह लेख महर्षि कृत उनके अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास को पढ़कर लिखा है । इसमें स्वामी जी ने प्रश्नोत्तर द्वारा मूर्तिपूजा पर तर्क के आधार पर कड़ा प्रहार किया है, जिसको पढ़कर विज्ञ पाठकगण अवश्य ही समझ लेंगे कि ईश्वर की उपासना केवल निराकार मानकर ही की जा सकती है और इसी उपासना से मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है । ईश्वर को साकार मानकर मूर्तिपूजा द्वारा ईश्वर की उपासना करना वेद विरूद्ध तो है ही साथ ही सही उपासना हो ही नहीं सकती। मैं समझता हूँ कि इस लेख को पढ़कर पाठकगण अवश्य ही लाभ उठायेंगे और मूर्त्तिपूजा छुड़ाने में इससे काफी सहयोग मिलेगा । यदि थोड़ा भी सहयोग मिला तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूँगा । लेख इसी भाँति है:-

प्रश्न - मूर्त्तिपूजा में पुण्य नहीं तो पाप भी नहीं ।

उत्तर - कर्म दो किस्म के होते हैं । **विहितः-** जो कर्त्तव्यता से वेद में सत्यभाषणादि प्रतिपादित है। **दूसरा निषिद्धः-** जो अकर्त्तव्यता से मिथ्या भाषणादि वेद में निषिद हैं । जैसे विहित का अनुष्ठान करना वह धर्म, उसका न करना अधर्म है, वैसे ही निषिद कर्म करना अधर्म और न करना धर्म है । जब वेद के विरूद्ध मूर्त्तिपूजादि कर्म आप करते हो तो पापी क्यों नहीं ।

प्रश्नः- साकार में मन स्थिर होता है और निराकार में स्थिर होना कठिन है इसलिए मूर्त्तिपूजा करनी चाहिए ।

उत्तरः- साकार में मन स्थिर कभी भी नही हो सकता क्योंकि उसको मन कर ग्रहण करके उसी के एक-एक अवयव में घूमने और दूसरे में दौड़ जाता है । और निराकार अनन्त परमात्मा के ग्रहण में यावन्सामर्थ्य मन अत्यन्त दौड़ता है तो भी अन्त नहीं पाता । निरवयव होने से चंचल भी नहीं रहता, किन्तु उसी के गुण-कर्म-स्वभाव का विचार करता-करता आनन्द में मग्न होकर स्थिर हो जाता है । और जो साकार में स्थिर होता तो सब जगत् का मन स्थिर हो जाता क्योंकि जगत् में मनुष्य, स्त्री, पुत्र, धन,मित्र आदि साकार में फँसा रहता है, परन्तु किसी का मन स्थिर नहीं होता है, इसलिए मूर्त्ति पूजा करना अर्धम है ।

प्रश्नः- जो अपने आर्य्यावर्त्त में ''पञ्चदेव पूजा'' शब्द प्राचीन काल से चला आता है, उसका ''पञ्चयतन पूजा'' जो शिव, विष्णु, अम्बिका, गणेश और सूर्य की मूर्त्ति बना कर पूजते हैं, तो क्या वही ''पञ्चयतन पूजा है या नहीं ?

उत्तरः- किसी प्रकार की मूर्त्ति पूजा न करना किन्तु मूर्त्तिमान'' की पूजा अर्थात सत्कार करना चाहिए

वह पञ्चदेव पूजा या **''पञ्चयतन पूजा''** शब्द बहुत अच्छे अर्थ वाला था परन्तु मूढ़ों ने उस संदर्भ को छोड़कर, असत्य अर्थ पकड़ लिया जो आजकल शिवादि पाँचो की मूर्त्तियां बना कर पूजते हैं, उनका खण्डन तो कर चुके हैं । सच्ची पञ्चयतन पूजा कुछ मन्त्रों के आधार पर इस प्रकार हैः-

प्रथम मूर्त्तिमती पूज्यनीय देवता के रूप में ''माता'', जिसको तन, मन, धन से तथा सेवा से सन्तन को चाहिए कि उसे प्रसन्न रखे । उसका मन किसी प्रकार से भी दुःखी न करे । दूसरा सत्कर्त्तव्य देव के रूप में ''पिता'', उसकी भी माता के समान सेवा करें । तीसरा देव जो विद्या को देने वाला है वह है ''आचार्य'' उसकी भी तन, मन, धन से सेवा करनी चाहिए । चौथा देव है ''अतिथि'' जो विद्धान्, धार्मिक, निष्कपट्टी, सब की उन्नति चाहने वाला, जगत् में भ्रमण करता हुआ सत्य उपदेश से सुखी करता है उसकी सेवा करनी चाहिए । पाँचवाँ स्त्री के लिए पति और पुरूष के लिए स्वपत्नी पूज्यनीय हैं । ये पाँच मूत्तिमान देव है जिनके संग से मनुष्य देह की उत्पत्ति, पालन, सत्यदिक्षा, विद्या और सत्योपदेश की प्राप्ति होती है । ये ही परमेश्वर की प्राप्ति होने की सीढ़ियाँ हैं । इनकी सेवा न करके जो पाषाणादि मूर्त्ति पुजते हैं, वे अतिव पामर, नरकगामी हैं ।

प्रश्नः- माता-पिता की सेवा करें और मूर्त्तिपूजा भी करें, तब तो कों दोष नहीं ।

उत्तरः- पाषाणादि मूर्त्तिपूजा तो सर्वथा छोड़ने और मातादि मूर्त्तिमानों की सेवा करने में ही कल्याण है । बड़े अनर्थ की बात है कि साक्षात् माता आदि प्रत्यक्ष सुखदायक देवों को छोड़ के अदेव पाषाणादि में शिर मारना, स्वीकार करते हैं । इसको मूढ़ो ने इसलिए, स्वीकार किया है कि जो माता-पितादि के सामने नैवेद्य या भेंट-पूजा धरेंगे तो वे स्वयं खा लेंगे और भेंट-पूजा भी ले लेंगे । हमारे मुख या हाथ में कुछ न पड़ेगा । इसीलिए वे पाषाणादि की मूर्त्ति बना, उसके आगे नैवेद्य व भेंट-पूजा चढ़ाते हैं ताकि उनको मिलता रहे ।

प्रश्नः- जैसे स्त्री आदि की पाषाणादि मूर्त्ति देखने से कामोत्पत्ति होती है वैसे ही वीतराग यान्त की मूर्त्ति देखने से वैराग्य और शान्ति की प्राप्ति क्यों न होगी ?

उत्तरः- नहीं हो सकती । क्योंकि उस मूर्त्ति के जड़त्व धर्म, आत्मा में आने से विचार शक्ति मर जाती है । विवेक के बिना वैराग्य, वैराग्य के बिना न विज्ञान, विज्ञान के बिना शान्ति नहीं होतीं । और जो कुछ होता है सो उनके संग उपदेश और उनके इतिहासादि के देखने से होता है । क्योंकि जिसका गुण या दोष न जानके उसकी मूर्त्ति मात्र देखने से प्रीति ही नहीं होती । प्रीति होने का कारण गुणज्ञान है ।

प्रश्नः- रामेश्वर में रामचन्द्र जी ने मूर्त्ति स्थापना किया है । यदि मूर्त्तिपूजा वेद विरूद्ध होती तो रामचन्द्र जी मूर्त्ति स्थापना क्यों करते और बाल्मीकि जी रामायण में क्यों लिखते ?

उत्तरः- रामचन्द्र जी के समय में शिवलिंग या मन्दिर का नामो निशान भी नहीं था । बाद में यह

ठीक है कि किसी दक्षिण देशस्थ ''राम'' राजा ने मन्दिर बनवा, लिंग का नाम ''रामेश्वर'' धर दिया हो । जब रामचन्द्र जी सीता को ले हनुमान आदि के साथ लंका से चले, आकाश मार्ग से विमान पर बैठ अयोध्या को आ रहे थे तब सीता जी से कहा कि - हे सीते ! तेरे वियोग से हम व्याकुल होकर घूमते थे और इसी स्थान में चतुर्मास किया था और परमेश्वर की उपासना, ध्यान भी करते थे । वही जो सर्वत्र विभु व्यापक महान् देवों का देव ''महादेव'' परमात्मा है, उसकी कृपा से हमको सब सामग्री यहाँ प्राप्त हुई और देख ! यह सेतु हमने बाँध कर लंका में आ करके, उस रावण को मार तुझको ले आये । इसके सिवाय वहाँ बाल्मीकि जी ने अन्य कुछ भी नहीं लिखा ।

(नोट:- श्री राम चन्द्र जी ने देवों के देव ''महादेव'' यानि परमात्मा की उपासना की लिखा है, यदि श्री राम स्वयं ईश्वर के अवतार होते तो ऐसा कभी नहीं लिखते)

प्रश्न:- यह मूर्त्ति पूजा और तीर्थ सनातन से चले आते हैं, झूठे क्योंकर हो सकते हैं ?

उत्तर:- तुम सनातन किसको कहते हो ? जो सदा से चला आता है । यदि यह सदा से होता तो वेद और ब्राह्मणादि ऋषि-मुनि कृत पुस्तकों में इनका नाम क्यों नहीं ? यह मूर्त्ति पूजा अढ़ाई-तीन सहस्त्र वर्ष के इधर-उधर वाम मार्गी और जैनियों से चली है । प्रथम आर्यावर्त्त में नहीं थीं और यह तीर्थ भी नहीं थे । जब जैनियों ने गिरनार, पालिराना, शिखर, शत्रुञ्जय और आबू आदि तीर्थ बनाये । उनको अनुकूल हम लोगों ने भी बना लिए । जो कोई इनके आरम्भ की परीक्षा करना चाहे, तो वे पण्डों की पुरानी बही, तांवे के पात्र आदि देखें तो निश्चय हो जायेगा कि ये सब तीर्थ पाँच सौ अथवा एक हजार वर्ष से इधर ही बने हैं । सहस्त्र वर्ष के ऊपर का लेख किसी के पास नहीं निकलता । इसी से सिद्ध होता है, ये सब आधुनिक हैं ।

प्रश्न:- देखो ! कलकत्ते की ''काली'' गोहाटी की ''कामाक्षा'' आदि देवी को लाखों मनुष्य मानते हैं । क्या यह चमत्कार नहीं हैं ।

उत्तर:- कुछ भी नहीं । ये अन्धे लोग भेड़ के तुल्य एक के पीछे दूसरे चलते हैं । कूप-खाई में गिरते है, हट नहीं सकते । वैसे ही एक मूर्ख के पीछे दूसरे चलकर मूर्त्ति पूजा रूपी गढ़े में फंस कर दु:ख पाते है ।

गोविन्द राम आर्य एण्ड सन्स,

१८० महात्मा गान्धी रोड

(दो तल्ला) कोलकाता - ७००००७ फोन -२२१८३८२५ (०३३)

नया ८२३२०२५५९० मोबाईल ९८३०१३५७९४

(शेषांश पृष्ठ २ का)

की सदस्या एवं **'आर्य-संसार'** मासिक पत्र की सह-सम्पादिका, श्रीमती सरोजनी शुक्ला जी का आकस्मिक निधन दिनांक २६-०८-२०१८ को प्रातः ७.४५ बजे लगभग ७९ वर्ष की आयु में हो गया है।

(३) आर्य समाज कलकत्ता के अन्तरंग सदस्य श्री अशोक सिंह जी की धर्मपत्नी श्रीमती शीला सिंह का निधन दिनांक ५.९.२०१८ को लगभग ६० वर्ष की आयु में हो गया।

(४) आर्य जगत् के मूर्धन्य विद्वान्, लेखक, साहित्यकार, पंजाब विश्वविद्यालय में दयानन्द अनुसंधान पीठ के अध्यक्ष, महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र **'नवजागरण के पुरोधा'** के लेखक तथा अनेकों आर्य साहित्य के सृजनकर्त्ता डा० भवानीलाल भारतीय जी का निधन दिनांक १२.९.२०१८ को लगभग ९० वर्ष की आयु में हो गया है।

आर्य समाज कलकत्ता में दिनांक क्रमशः ५-८-२०१८, ९-९-२०१८ व १६-९-२०१८ के रविवारीय साप्ताहिक सत्संग पर एकत्रित समस्त आर्यजनों ने उपर्युक्त दिवंगत विभूतियों के निधन पर हार्दिक सम्वेदना प्रकट करते हुए दिवंगत आत्मा की शान्ति एवं सद्गति तथा शोक सन्तप्त परिवार को वियोग जन्म दुःख को सहन करने की क्षमता प्रदान करने की प्रार्थना की गई।

(शेषांश पृष्ठ १२ का)

से धर्म सम्बन्धी बातचीत रहती थी। पंडित पन्त जी से श्राद्ध के विषय में वार्तालाप हुआ। इन पंडितों का नियम था कि चार छः घड़ी रहे नित्य जाया करते थे। पंडित पन्त सखानन्द का नियम था कि मृतकश्राद्ध की क्रिया में भेड़ के बाल के स्थान पर अपनी छाती के एक-दो बाल उखाड़ कर चढ़ा दिया करता था। गुरुदत्त जी ने स्वामी जी से कहा, स्वामी जी ने पन्त जी से पूछा। उन्होंने श्रुतियों के प्रमाण दिये और पहाड़ियों को हजारों गालियां दीं कि गुरुदत्त आदि ने आपसे मेरी निन्दा की। उसके श्रुति के उच्चारण से स्वामी जी अत्यन्त प्रसन्न हुए, मुझे श्रुतियाँ स्मरण नहीं। स्वामी जी की आज्ञा थी कि जीवित का श्राद्ध करना चाहिए जिसकी विधि यह थी कि रबड़ी के पिंड बनाकर उस ब्राह्मण आदि के हाथ में दें जिसको निमन्त्रित किया गया हो, फिर उसको खिला दें। यहाँ एक भारी व्यास ब्राह्मण, एक ब्रह्मा ब्राह्मण, एक बलकेश्वर ब्राह्मण - इन तीनों को कराये थे और ऋषि-तर्पण अर्थात् श्रावणी उपाकर्म भी बुद्धिपूर्वक यहां बहुत से ब्राह्मणों को कराया था। स्वामी जी यहां मूर्तिपूजन को बिल्कुल न मानते थे। अठारह पुराणों के विरोधी थे। वाल्मीकि और (महा) भारत को मानते थे और वेद और ब्राह्मण मानते थे। मनुस्मृति के प्रक्षिप्त श्लोक छोड़कर शेष सब मानते थे ओर अष्टाध्यायी और महाभाष्य को भी स्वीकार करते थे। तर्कसंग्रह को नर्कसंग्रह कहते थे। न्यायदर्शन और षट्दर्शन मानते थे। चार वेद छः अंग भी मानते थे; तीर्थ को नहीं मानते थे। जीव ब्रह्म को पृथक् मत्ते थे। पंडितों से ही उनकी बातें हुई— हमारी बातचीत नहीं हुई। सरल संस्कृत बोलते थे जिसे सब लोग समझ लेते थे। एक दीपेश्वर भी उनके पास जाया करते थे। स्वामी जी अत्यन्त दृढ़ तथा हृष्टपुष्ट शरीरधारी युवक थे।

क्रमशः ....

आर्य समाज कलकत्ता के प्रकाशन

पुस्तक विक्रेता, आर्य संस्थाओं, उपदेशकों को ४० प्रतिशत की छूट दी जाती है ।

पुस्तक का नाम	लेखक/सम्पादक	मूल्य
१. युग निर्माता सत्यार्थ प्रकाश-संदर्भ दर्पण (ऐतिहासिक संदर्भ में सत्यार्थ प्रकाश की यात्रा का दस्तावेज)	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	७०.००
२. स्वामी दयानन्द का राजनीति दर्शन (स्वामी दयानन्द के राजनीत दर्शन का समीक्षात्मक अध्ययन)	डॉ० लाल साहेब सिंह	५०.००
३. भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में आर्य समाज की देन (उन्नीस उत्कृष्ट निबंधों का संग्रह)	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय द्वारा सम्पादित	१५.००
४. त्रैतवाद का उद्भव और विकास (त्रैतवाद का उसके उद्भव और विकास के वैशिष्ट्य को स्पष्ट करने वाला दर्शन का शोधपूर्ण ग्रंथ)	डॉ० योगेन्द्र कुमार शास्त्री	२०.००
५. उपनिषद् रहस्य (ईश केन और प्रश्न उपनिषदों की सारगर्भित व्याख्या)	महात्मा नारायण स्वामी ''सरस्वती''	२०.००
६. श्री श्री दयानन्द चरित	श्री सत्यबन्धुदास	१०.००
७. महर्षि दयानन्द की देन (निबन्धों का संग्रह)	आर्यसमाज कलकत्ता द्वारा प्रकाशित	३०.००
८. धर्मवीर पं० लेखराम	स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती	५०.००
९. आनन्द संग्रह (स्वामी सर्वदानन्दजी महाराज के उपदेशामृत)	वीतराग स्वामी सर्वदानन्दजी महाराज	२५.००
१०. भाई परमानन्द (बलिदानी वंश के कुलदीपक की अमर कहानी)	श्री बनारसी सिंह	१०.००
११. धर्म का आदि स्त्रोत	पं० गंगाप्रसाद जी	३०.००
१२. संकल्प सिद्धि (विचारों के संकल्प विकल्प का अनोखा चिन्तन)	स्वामी ज्ञानाश्रम	३०.००
१३. ज्योतिर्मय (श्रीयुत् टी. एल. वास्वानी द्वारा लिखित (Torch Bearer)) का हिन्दी अनुवाद	टी॰एल॰ वास्वानी	३०.००
१४. वेद-वैभव	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	१५०.००
१५. कर्मकाण्ड	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	१०.००
१६. स्वतंत्रता संग्राम में आर्य समाज का योगदान	ले० सत्यप्रिय शास्त्री	५०.००
१७. आर्यसमाज कलकत्ता का इतिहास	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	८०.००
१८. मेरे पिता	इन्द्र विद्यावाचस्पति	५०.००
१९. वेद और स्वामी दयानन्द	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	४०.००
२०. व्यतीत के यश की धरोहर (महासम्मेलनों के संस्मरणात्मक आकलन)	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	६०.००
२१. Torch Bearer	टी० एल० वास्वानी	३५.००
२२. पं० गुरुदत्त लेखावली	मुनिवर पं० गुरुदत्तजी 'विद्यार्थी'	२५.००
२३. प्रार्थना प्रवचन	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	५०.००
२४. सन्ध्यारहस्य एवं संन्ध्या अष्टांग योग	प्रो० चमूपति एवं स्व० आत्मानन्द (एक जिल्द)	३०.००
२५. बंगाल शास्त्रार्थ	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	४०.००
२६. वेद में गोरक्षा या गोवध	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	५.००
२७. वेद रहस्य	महात्मा नारायण स्वामी जी	३५.००
२८. वेद वन्दन	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	१६०.००
२९. राज प्रजाधर्म प्रबोधभाष्य	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	७०.००
३०. वेद-वीथिका	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	१६०.००

आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी कोलकाता - ६ के लिए **श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल** द्वारा प्रकाशित तथा एशोशियेटेड आर्ट प्रिण्टर्स, ७/२, विडन रो, कोलकाता-६ में मुद्रित ।